**International Journal of Hindi Research**
**ISSN: 2455-2232, Impact Factor: RJIF 5.22**
**www.hindijournal.com**
**Volume 2; Issue 4; July 2016; Page No. 49-50**

# समसामयिक सामाजिक विसंगतियाँ और हिंदी कविता

**आनन्द कुमार मिश्रा**

शोध छात्र (हिंदी), हिन्दी एवं आधुनिक भरतीय भाषा विभाग, लखनऊ विष्वविद्यालय, लखनऊ, उत्तर प्रदेश, भारत।

**प्रस्तावना**

हिंदी कविता पर बात करने से पहले सर्वप्रथम यह जान लेना आवश्यक हैं कि कविता मूलरूप में हैं क्या ?

'कविता क्या है/कोई पहनावा है ?'
कुर्ता पजामा हैं ? ना, भाई ना/
कविता/शब्दों की अदालत में।
मुजरिम के कठघरे में खड़े बेक़सूर आदमी का
हलफनामा है/क्या वह व्यक्तित्व बनाने की/
खाने कमाने की चीज है?
ना, भाई ना/कविता
भाषा में/आदमी होने की तमीज हैं।' –धूमिल

अरूण कमल जी के शब्दों में–''कविता निर्बलों का बल हैं, कविता उसका पक्ष है जिसका कोई नहीं, जो सबसे कमजोर, सबसे असहाय है, जिस पर बाकी सबका बोझ है।''

हिंदी कविता आदिकालीन परिवेश से निकलकर भक्ति के रस में सराबोर होते हुए रीतिकालीन सौंदर्यवादी और मांसलता से बाहर निकल जब आधुनिक युग में प्रवेश करती है तब उसका स्वरूप पूर्णता बदल चुका होता है। वह समाज की कुरीतियों, जड़ हो चुकी मान्यताओं, बाह्यडम्बरों और सामाजिक शोषण पर करारा व्यंग्य करती हैं, उस पर प्रहार करती है, तथा हमारे समक्ष उसका वास्तविक प्रतिबिम्ब प्रस्तुत करती है।

आज के इस वैज्ञानिक युग और भूमंडलीकरण ने भारतीय समाज व्यवस्था को कई तरह से प्रभावित किया है। गाँधीवादी जीवन दर्शन, लोकतान्त्रिक समाजवाद, मार्क्सवाद तथा पूंजीवाद ने भी भारतीय जनमानस को प्रभावित किया है। आज चारों तरफ तिकड़मों, धोखाधड़ी, जालसाजी, भ्रष्ट्राचार का तंत्र सर्वत्र व्याप्त है। शासन व्यवस्था, आम आदमी की अकुलाहट और निरर्थकता, आर्थिक– बेरोजगारी, साम्प्रदायिकता तथा आंतकवाद और अलगाववाद ने देश के वर्तमान को झकझोर के रख दिया है वही भविष्य के सामने बड़ी चुनौती को खड़ा किया है।

वर्तमान समय में समाज विभिन्न तरह की विंसगतियों के जाल में जकडा हुआ है। यह विडम्बनाजनक स्थिति ही है कि 21 वीं सदी के इस वैज्ञानिक युग में भी अनेक ऐसे जनसमुदाय है जो तथाकथित पारम्परिक दकियानूसी विचारधारा के शिकार हैं, जो जातिगत, धर्मगत एवं सम्प्रदायगत संकीर्ण मानसिकता में उलझे हुए हैं। ऐसे लोगो के लिए नार्गाजुन जी नाकारात्मक रवैया अपनाते हुए कहते है–

''मैं तुम्हें रोटी नहीं दे सकता ना उसके
साथ खाने के लिए बम
ना मिटा सकता हूँ ईश्वर के विषय में तुम्हारा श्रम
लोगो में श्रेष्ठ लोगो मुझे माफ करो
मैं तुम्हारे साथ आ नहीं सकता।''

इस देश में लम्बे समय से दो प्रमुख वर्गों का अस्तित्व रहा हैं–शोषक और शोषित वर्ग। यहाँ सभी कमजोर को सबसे पहले बेदखल करने में लगे हुए है। व्यवस्था ही ऐसी है कि शोषित जन और उपेक्षित और दरिद्र होते जा रहें है। ऐसी व्यवस्था के संदर्भ में रघुवीर सहाय जी का कथन है–

'लोकतंत्र ने हमें इंसान की शानदार जिदंगी और कुत्ते की मौत के बीच चाँप लिया है।' समसामायिक सामाजिक विसंगतियों की परिधि में दलित, आदिवासी, स्त्री, किसान, बन्धुवा मजदूरों व बाल–मजदूरों की अस्मिता उसके अधिकारों एवं सामाजिक सरोकार पर चर्चा करना भी महत्वपूर्ण है। आधुनिक/समसामयिक हिन्दी कविता में दलितो की स्थित, उनके शोषण तथा उनकी दशा को बहुत ही मार्मिक एवं यथार्थवादी तरीके से चित्रित किया गया है। भारत की जनजातियों की आदिम सभ्यता एवं उनके रीति–रिवाज से सभ्य समाज द्वारा लगातार छेड़छाड़ की जा रही है। उनकी चिंताओं और अपेक्षाओं से आधुनिक कविता ने परिचय कराया है। पुरानी पड़ चुकी परम्पराओं, आडम्बरों पर कुठाराघात करते हुए ओमप्रकाश वाल्मीकि जी लिखते है और प्रश्न करते है–

''यज्ञो में पशुओं की बलि चढ़ाना
किस संस्कृति का प्रतीक है
मैं नही जानता
शायद आप जानते हो।
चूहड़े या डोम की आत्मा
ब्रह्म का अंश क्यों नहीं है
मैं नहीं जानता शायद आप जानते हो।''

इसी तरह स्त्री–विमर्श वर्तमान समय में मर्मांतक विषय बना हुआ है। किन्तु दुर्भाग्य ही है कि जहाँ एक ओर नारी मुक्ति आंदोलन चलाये जा रहे है वहीं दूसरी ओर आज भी देश की बहु–बेटियों को दहेज की लपटों में जला दिया जाता है, उनके साथ बलात्कार किया जाता है और आज भी कन्याओं को भ्रूण में ही मार दिया जाता है। नारी की अधिकारों की मांग समकालीन कवितओं में बार–बार उठायी गयी है और उठायी जा रही हैः कात्यायनी, अनामिका ही नहीं गगन गिल, सीमा सोनी, रजनी तिलक तथा शुभ ने भी अपने–अपने ढ़ग से इसे प्रस्तुत किया है। इनकी कविताओं में कहीं नारी शोषण की पीड़ा है तो कहीं सांमतवादी सोच पर करारा प्रहार–

''आज इस आधुनिक युग में
गर्भ में ही कन्यावध होता है
वहाँ से बच गये तो
ससुराल में होता है उसका होम
दहेज की आग में
नारी युग की त्रासदी
पतित संस्कृति की
सुस्मिता सेन और ऐश्वर्या राय
पूँजीवादी मकड़जाल का खिलौना।'' –रजनी तिलक

कहा जाता है कि भूमण्डलीकरण, उदारीकरण और निजीकरण ने हमें बहुत कुछ दिया है, उसने दुनिया को बदल दिया है परन्तु किस रूप में ? क्या सिर्फ अर्थतंत्र के रूप में या साहित्य और

संवेदना के स्तर पर भी ? यदि विकास बहुमुखी हेाता है तो उसमें अन्य तत्व भी सम्मिलित होते है। बाजारवाद ने आम आदमी के जीवन को उलझनों और असुरक्षा के भाव–बोध में उलझा कर रख दिया है। इसकी चकाचौंध रोशनी ने आम आदमी (किसानों, मजदूरों, श्रमिकों) के जीवन को और अंधकार में कर दिया है। आज इंसान असंवेदनशील होता जा रहा बच्चों से पुरजोर श्रम कराया जा रहा है। बधुआ बाल–मजदूर की समस्या पर राजेश जोशी की एक कविता है– 'बच्चे काम पर जा रहे है' जो आज की व्यवस्था पर करारा व्यंग करती है–

'कोहरे से ढकी सड़क पर
बच्चे काम पर जा रहे है।
सुबह–सुबह
बच्चे काम पर जा रहे है
हमारे समय की सबसे भयानक पंक्ति है यह
भयानक है इसे विवरण की तरह लिखा जाना
लिख जाना चाहिए इसे एक सवाल की तरह
काम पर क्यों जा रहे है, बच्चे ?'

वर्तमान समय में आतंकवाद एवं सम्प्रदायवाद ने मानवीय जीवन को एक गहरे खाई में खड़ा कर दिया है। आज सामाजिक विसंगतियाँ दिनों दिन उभरती व बढ़ती जा रही है। उपभोक्तावादी संस्कृति ने आम आदमी को कठघरे में लाकर खड़ा कर दिया है। चारो ओर अविश्वास, अवसरवादिता, जुगाड़ व 'कनेक्शन' का सिस्टम व्याप्त है। श्रीकांत वर्मा ने सामाज में व्याप्त जर्जर मान्यताओं, रूढ़िग्रस्त–मूल्यों, अविश्वासों, अनैतिकताओं, अवसरवादियों पर कुठाराघात किया है। 'एक मुर्दे का बयान' शीर्षक कविता की चंद पंक्तियां दृष्टव्य है–

'मैं एक कविता था। मैं एक झूठ था।
मैं एक बीमा कम्पनी का एजेंट था।
मैं एक सड़ा हुआ प्रेम था
मैं एक मिथ्या कर्तव्य था
मौका पड़ने पर नेपोलियन था
मौका पड़ने पर शहीद था।'

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि आज की हिंदी कविता इन सभी सामाजिक विंसगतियों, विड़म्बनाओं और तनाव से जुड़े सवालों से टकराती हुई समाज के सामने उसका प्रतिबिम्ब प्रस्तुत करती है तथा आधुनिक मनुष्य और उसके परिवेश के बीच अलगाव को व्यक्त करती है। वह समाज में जी रहे या जीने पर विवश हाशिये पर पड़े आम आदमी की समस्याओं और उलझनों को भी बड़े ही पुरजोर व यथार्थवादी दृष्टि से प्रस्तुत करती है। किंतु वर्तमान काव्य लेखन के समक्ष एक चिंता और चुनौती भी है कि क्या कारण है कि आज कविता का पक्ष इतना मजबूत होन के बावजूद भी पाठकों की संख्या बढ़ नहीं रही है, बल्कि घट रही है ? शायद इसका कारण हैं काव्य–लेखन पर पड़ता बाजारवाद का प्रभाव और सस्ती लोकप्रियता, जिसके प्रति आज के बुद्धिजीवी लेखक–वर्ग को सतर्क रहने की आवश्यकता है।

## सन्दर्भ सूची


1. राजेश जोशी, 'बच्चे काम पर जा रहे है', समकालीन भारतीय साहित्य, जुलाई–सितम्बर, 90
2. Gadyakosh.org/gk/समकालीन–कविता–का–समाजशास्त्र–रवि–रंजन
3. www.hindisamay.com/contentDeatil.aspx?id=3382&page no.=6
4. googel/समकालीन हिन्दी कविता की भविष्य दृष्टि